अध्याय 15

प्राकृतिक वनस्पति एवं मृदाएँ

प्राकृतिक वनस्पति एवं वन्य जीव किसी भी राष्ट्र की समृद्धि के आधार होते हैं। हमारे भारत के प्राकृतिक पर्यावरण का यह एक महत्वपूर्ण घटक है। भारत में प्राकृतिक वनस्पति एवं वन्य जीव बहुतायत में रहे हैं लेकिन अब अविवेकपूर्ण दोहन से इनका विनाश बढ़ता जा रहा है। मानव सभ्यता को बनाये रखने के लिये प्राकृतिक वनस्पति एवं वन्य जीवों को बचाये रखना अत्यंत आवश्यक है।

भारत की राष्ट्रीय वन नीति के अनुसार भौगोलिक क्षेत्रफल के 33 प्रतिशत भाग पर वन होना अनिवार्य है। प्राकृतिक पर्यावरण में भिन्नता के कारण हमारे देश में वनों के प्रकार व वितरण में राज्य व क्षेत्र अनुसार भी भिन्नता पायी जाती है। भारत एक विशाल देश है, जिससे यहाँ तापमान, वर्षा, मिट्टी, धरातल की प्रकृति, पवनों व सूर्य–प्रकाश के प्रारूप में भिन्नता पायी जाती है। इसलिए देश में विभिन्न प्रकार की वनस्पतियों का पाया जाना स्वाभाविक है।

वनों के प्रकार व वितरण

भारत में पाई जाने वाली वनस्पति के अनुसार प्रमुख प्रकार के वन निम्नलिखित है–

1. सदाबहार वन –

ये वन देश के उन भागों में मिलते हैं, जहाँ औसत वर्षा 200 से.मी. से अधिक तथा वार्षिक औसत तापमान 24^{0} से.ग्रे के लगभग रहती है। इसके तीन प्रमुख क्षेत्र हैं – 1 पश्चिमी घाट के पश्चिमी ढाल, 2. अण्डमान–निकोबार द्वीप समूह एवं 3. उत्तरी–पूर्वी भारत में बंगाल, असम, मेघालय और तराई प्रदेश। इस प्रकार के वनों में मुख्य रूप से रबर, महोगनी, एबोनी, लौह–काष्ठ, जंगली आम, ताड़ आदि वृक्ष व बांस तथा कई प्रकार की लताएं पायी जाती है। इन वृक्षों की ऊँचाई 30 से 45 मीटर तक होती है। वृक्षों की सघनता इतनी अधिक होती है कि धरातल पर सूर्य का प्रकाश नहीं पहुँच पाता।

इन वृक्षों का शोषण कम होता है क्योंकि इनकी लकड़ी कठोर होती है। एक ही स्थान पर विभिन्न प्रकार के वृक्ष पाये जाते हैं। वृक्षों, लताओं व छोटे–छोटे पौधों की सघनता होती है, जिससे वृक्षों को काटने में असुविधा होती है तथा परिवहन के साधनों की कमी है, इसलिये आर्थिक दृष्टि से इनका उपयोग अधिक नहीं हुआ है।

2. पतझड़ी या मानसूनी वन –

ऐसे वन उन भागों में पाए जाते हैं, जहाँ 100 से.मी. से 200 से.मी. तक औसत वार्षिक वर्षा होती है। ये वन उत्तरी पर्वतीय प्रदेश के निचले भाग, विंध्याचल व सतपुड़ा पर्वत, छोटा नागपुर व असम की पहाड़ियां, पूर्वी घाट के दक्षिणी भाग एवं पश्चिमी घाट का पूर्वी क्षेत्र में पाये जाते है। ये वन न अधिक घने और वृक्ष न अधिक ऊँचे होते हैं। इनमें प्रमुख वृक्ष साल, सागवान, नीम, चन्दन, रोजवुड, आंवला, शहतूत, एबोनी, आम, शीशम, बाँस आदि हैं। इनकी लकड़ी अधिक कठोर नहीं होती है। ये आसानी से काटे जा सकते हैं। इनकी लकड़ी से जलयान, फर्नीचर आदि बनाए जाते हैं। इन क्षेत्रों में यातायात के साधनों के विकसित होने के पश्चात् अधिक मांग व अधिक उपयोग से लगातार दोहन के कारण ऐसे वनों का क्षेत्र दिन–प्रतिदिन घटता जा रहा है।

3. शुष्क वन –

ये वन उन क्षेत्रों में पाये जाते हैं, जहाँ वर्षा का औसत 50 से.मी. से 100 से.मी. तक होता है। इन क्षेत्रों में जल की कमी सहन करने वाले वृक्षों की बहुतायता मिलती है। इन वृक्षों की जड़े लम्बी व मोटी होती है। इस प्रकार के वन मुख्यतः दक्षिणी–पश्चिमी पंजाब, हरियाणा, पूर्वी राजस्थान व दक्षिणी–पश्चिमी उत्तर प्रदेश में पाए जाते हैं। प्रमुख वृक्ष कीकर, बबूल, नीम, आम, महुआ, करील, खेजड़ी आदि हैं। वर्षा के अभाव में वृक्ष कम ऊँचे होते हैं। वृक्षों की ऊँचाई 6 से 9 मीटर होती है। इन वनों का केवल स्थानीय महत्व है।

4. मरूस्थलीय वन –

ये वन 50 से.मी. से कम वर्षा वाले भागों में पाए जाते

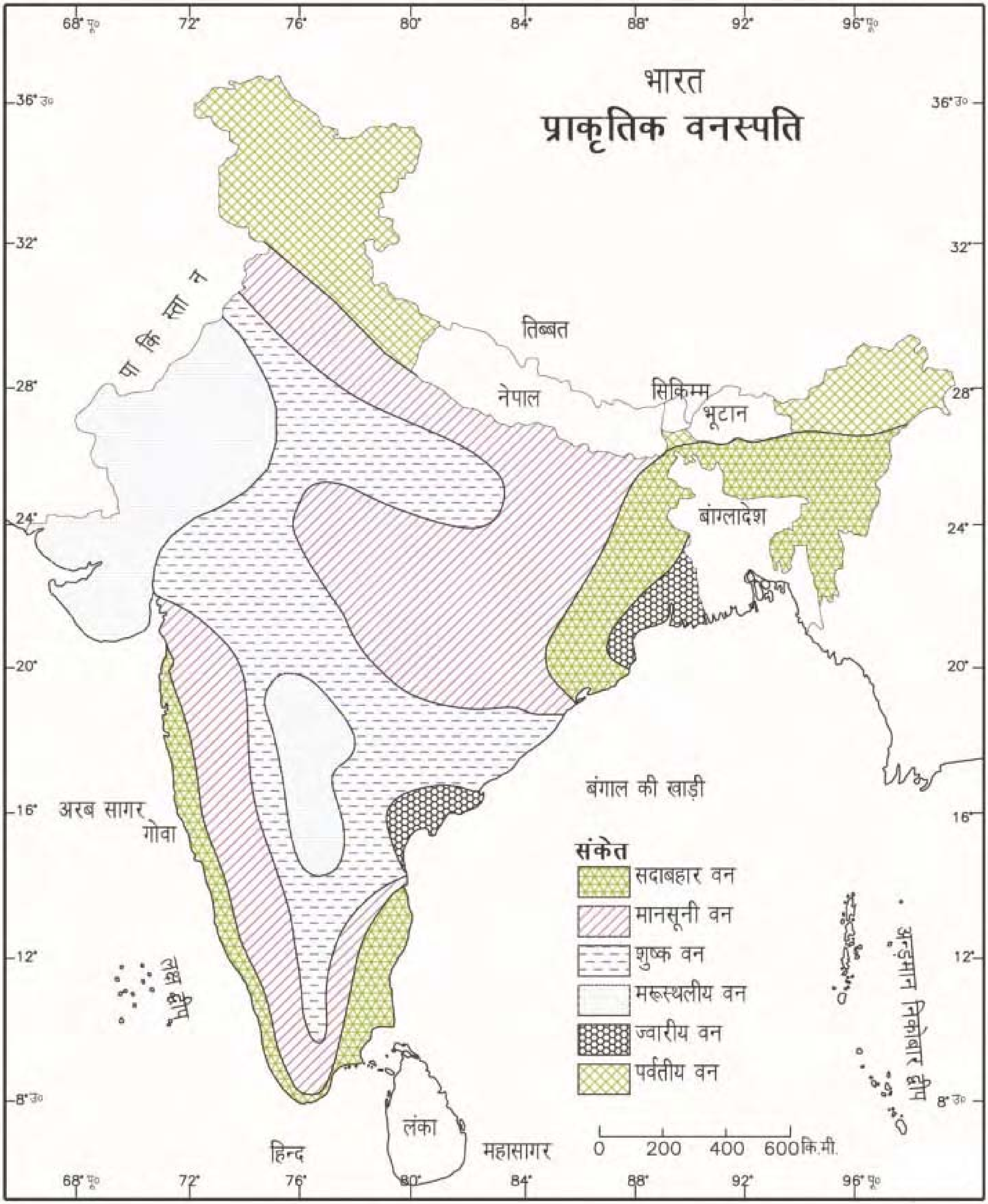

भारत
प्राकृतिक वनस्पति
पाकिस्तान
तिब्बत
नेपाल
सिकिम्म
भूटान
बांग्लादेश
बंगाल की खाड़ी
अरब सागर
गोवा
लक्ष द्वीप
अण्डमान निकोबार द्वीप
लंका
हिन्द
महासागर
संकेत
सदाबहार वन
मानसूनी वन
शुष्क वन
मरूस्थलीय वन
ज्वारीय वन
पर्वतीय वन
0 200 400 600 कि.मी.
68° पू०
72°
76°
80°
84°
88°
92°
96° पू०
36° उ०
32°
28°
24°
20°
16°
12°
8° उ०

है। यहाँ के वृक्षों में पत्तियाँ कम, छोटी तथा काँटेदार होती हैं। बबूल यहाँ बहुतायत से उगते हैं। नागफनी, रामबांस, खेजड़ी, खैर, खजूर आदि यहाँ की प्रमुख वनस्पति हैं। ये वनस्पतियाँ दक्षिणी–पश्चिमी पंजाब, पश्चिमी राजस्थान, गुजरात, मध्य–प्रदेश आदि राज्यों में पायी जाती हैं। इनका केवल स्थानीय महत्त्व है।

5. ज्वारीय वन –

इन्हें दलदली वन भी कहा जाता है। ये वन महानदी, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी आदि प्रायद्वीपीय नदियों के मुहानों पर तथा गंगा–ब्रह्मपुत्र के डेल्टाई भागों में पाए जाते हैं। ज्वार–भाटे के समय समुद्र का अग्रसित जल वृक्षों की जड़ों को सींचता है। ऐसे प्रदेशों में कीचड़ तथा दलदल होती है। इन वनों के सुन्दरी वृक्ष गंगा–ब्रह्मपुत्र के डेल्टा में विशेष रूप से पाए जाते हैं। अन्य वृक्ष ताड़, नारियल, हैरोटीरिया, राइजोफोरा, सोनेरेशिया आदि हैं। इन वृक्षों की लकड़ी मुलायम होती है।

6. पर्वतीय वन –

इस प्रकार के वन दक्षिणी भारत में महाराष्ट्र के महाबलेश्वर तथा मध्य प्रदेश के पचमढ़ी आदि ऊँचे भागों में 1500 मीटर की ऊँचाई पर पाए जाते है। यहाँ वृक्ष 15 से 18 मीटर ऊँचे होते हैं। वृक्ष मोटे तने वाले होते हैं, जिनके नीचे सघन झाड़ियाँ मिलती हैं। वृक्षों की पत्तियाँ घनी व सदाबहार तथा टहनियों पर लताएँ छाई रहती हैं। अधिक ऊँचें भागों में यूजेनिया, मिचेलिया व रोडेनड्रॉंस आदि वृक्ष मिलते हैं। उत्तरी भारत में हिमालय पर्वत श्रेणियों पर भिन्न–भिन्न ऊँचाई पर भिन्न भिन्न प्रकार की वनस्पतियाँ पाई जाती हैं। 1000 से 2000 मीटर की ऊँचाई पर चौड़ी पत्ती वाले ओक तथा चेस्तनत, 1500 से 3000 मीटर की ऊँचाई पर शंकुधारी वृक्ष जैसे देवदार, स्प्रूस,चीर इत्यादि तथा 3500 से अधिक ऊँचाई पर अल्पाइन वनस्पति जैसे सिल्वर फर, बर्च, जूनिपर इत्यादि पाए जाते हैं।

भारत में वन्य जीव

भारत में विभिन्न प्रकार के प्राणी बड़ी संख्या में पाये जाते हैं। यहाँ प्राणियों की लगभग 75,000 प्रजातियाँ पायी जाती है। उनमें 350 स्तनधारी, 1,313 पक्षी, 408 सरीसृप, 197 उभयचर, 2,546 मछलियां, 50,000 कीट, 4,000 मोलस्क तथा अन्य बिना रीढ़ वाले प्राणी है। यह विश्व का कुल 13 प्रतिशत है।

स्तनधारी जानवरों में हाथी सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। ये असम, कर्नाटक और केरल के उष्ण तथा आर्द्र वनों में पाए जाते हैं। एक सींग वाले गैंडे पश्चिमी–बंगाल तथा असम के दलदली क्षेत्रों में रहते हैं। कच्छ के रन तथा थार मरूस्थल में क्रमशः जंगली गधे तथा ऊँट रहते हैं। भारतीय भैंस, गाय, बैल, नील गाय, घोड़ा, चौसिंघा, छोटा मृग (गैजल), कुत्ते तथा विभिन्न प्रजातियों वाले हिरण आदि कुछ अन्य जानवर हैं जो भारत में पाए जाते हैं। यहाँ बंदरों की भी अनेक प्रजातियाँ पाई जाती है।

भारत विश्व का अकेला देश है जहाँ शेर तथा बाघ दोनों पाए जाते हैं। भारतीय शेरों का प्राकृतिक वास स्थल गुजरात में गिर जंगल है। बाघ मध्य प्रदेश तथा झारखंड के वनों, पश्चिमी बंगाल के सुन्दरवन तथा हिमालयी क्षेत्रों में पाए जाते हैं। बिल्ली जाति के सदस्यों में तेंदुआ भी है। यह शिकारी जानवरों में मुख्य है।

हिमालय क्षेत्रों में पाए जाने वाले जानवर अपेक्षाकृत कठोर जलवायु को सहन करने वाले होते हैं जो अत्यधिक ठंड में भी जीवित रहते हैं। लद्दाख की बर्फीली ऊँचाइयों में याक पाए जाते हैं जो गुच्छेदार सींगों वाला बैल जैसा जीव है जिसका भार लगभग एक टन होता है। तिब्बतीय बारहसिंघा, भारल (नीली भेड़), जंगली भेड़ तथा किआंग (तिब्बती जंगली गधे) भी यहाँ पाए जाते हैं। कहीं–कहीं लाल पांडा भी कुछ भागों में मिलते हैं।

नदियों, झीलों तथा समुद्री क्षेत्रों में कछुए, मगरमच्छ और घड़ियाल पाए जाते हैं। घड़ियाल, मगरमच्छ की प्रजाति का एक ऐसा प्रतिनिधि भी है जो विश्व में केवल भारत में पाया जाता है।

भारत में अनेक रंग–बिरंगे पक्षी पाए जाते हैं। मोर, बत्तख, तोता, मैना, सारस,गिद्ध, उल्लू, कौआ तथा कबूतर आदि कुछ पक्षी प्रजातियाँ हैं जो देश के वनों तथा आर्द्र क्षेत्रों में रहती है।

राजस्थान की प्राकृतिक वनस्पति

राजस्थान में लगभग 34,610 वर्ग किलोमिटर क्षेत्र में विभिन्न प्रकार की वनस्पतियां मिलती है। यह राज्य के कुल क्षेत्रफल का 10.12 प्रतिशत है। राजस्थान में सघन वन आवरण

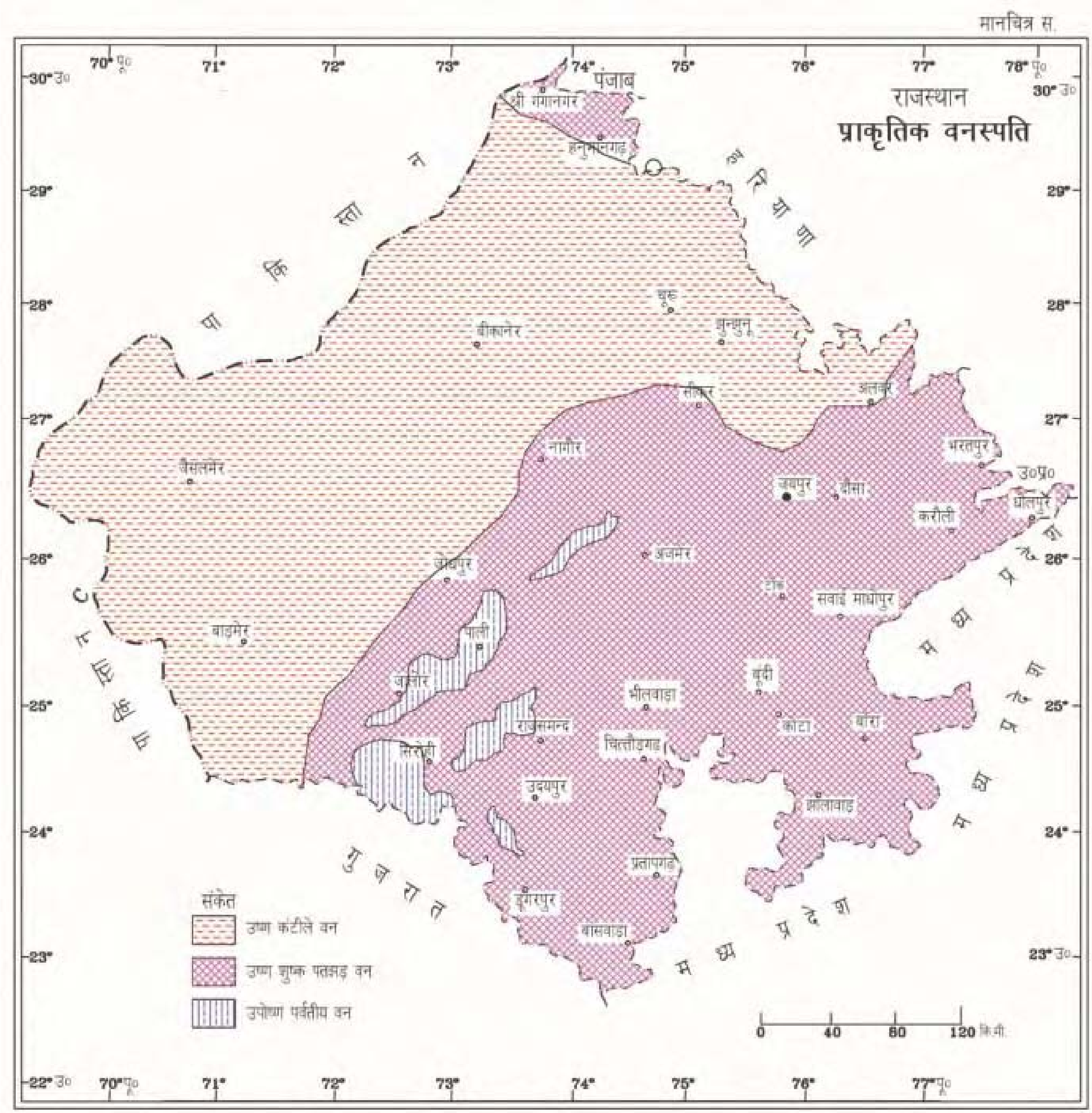

क्षेत्र तो 3.83 प्रतिशत ही है। राजस्थान में प्रति व्यक्ति वन क्षेत्र मात्र 0.03 हैक्टर है। जो सम्पूर्ण भारत के प्रति व्यक्ति वन क्षेत्र 0. 13 हैक्टर से काफी कम है। राजस्थान में वनों के भौगोलिक वितरण में बहुत भिन्नता है। राज्य की वनस्पतियां यहाँ की जलवायु, मिट्टी, भूमि की स्थिति तथा भूगर्भिक इतिहास से प्रभावित है। यहाँ पर प्राकृतिक वनस्पति तीन प्रकार की पायी जाती है। वन, घास व मरूस्थलीय वनस्पति। राज्य के वनों का वर्गीकरण एवं वितरण इस प्रकार है –

वनों के प्रकार

धरातलीय स्वरूप, जलवायु व मिट्यिों की भिन्नता के कारण राजस्थान में भौगोलिक दृष्टि से निम्नलिखित प्रकार के वन मिलते हैं –

1. उष्ण कटिबंधीय कंटीले वन,
2. उष्ण कटिबंधीय शुष्क पतझड़ वाले वन तथा
3. उपोष्ण पर्वतीय वन।

1. उष्ण कटिबंधीय कंटीले वन – इस प्रकार के वन पश्चिमी मरूस्थलीय शुष्क व अर्द्ध–शुष्क प्रदेशों में पाये जाते हैं। जैसलमेर, बाड़मेर, पाली, बीकानेर, चूरू, नागौर, सीकर, झुन्झुनूं आदि जिलों में इस प्रकार की वनस्पति पाई जाती है। इन वनों में पेड़ बहुत छोटे आकर के होते हैं व छोटी झाड़ियों की अधिकता होती है। इस प्रकार के शुष्क जलवायु वाले वनों में खेजड़ी, रोहिड़ा, बैर, कैर, थोर आदि के वृक्ष व झाड़ियाँ उगते हैं। इन पेड़ों व झाड़ियों की जड़े लम्बी होती हैं तथा पत्तियाँ कंटीली होती हैं। मरूस्थलीय प्रदेश में खेजड़ी की अत्यधिक उपयोगिता के कारण इसे मरूस्थल का कल्पवृक्ष कहा जाता है।

इन वनों में कई तरह की झाड़ियां भी पाई जाती हैं। फोग, आकड़ा, कैर, लाना, अरणा व झड़बेर इस क्षेत्र की प्रमुख झाड़ियां है। इनके अतिरिक्त इस क्षेत्र में कई तरह की घास भी पाई जाती है। इन घासों में सेवण व धामण नाम की घास बहुत प्रसिद्ध है। धामण घास दुधारू पशुओं के लिए बहुत उपयोगी होती है जबकि सेवण घास सभी पशुओं के लिए पौष्टिक होती है।

2. उष्ण कटिबन्धीय शुष्क पतझड़ वाले वन – इन वनों का विस्तार राजस्थान के बहुत बड़े क्षेत्र में है। ये वन राजस्थान के 50 से 100 से.मी. वर्षा वाले क्षेत्रों में पाये जाते हैं। ये वन राजस्थान के मध्य, दक्षिणी व दक्षिणी–पूर्वी भागों में बहुतायत से पाये जाते हैं। विभिन्न तरह के वृक्षों की विविधता के कारण इन वनों के कई उप प्रकार हैं जो निम्नलिखित है –

(i) शुष्क सागवान के वन – ये वन 250 से 450 मीटर की ऊँचाई वाले क्षेत्रों में मिलते हैं। इन वनों में सागवान वृक्ष बहुतायत से पाये जाने पर इन्हें यह नाम दिया गया है। इन वनों का विस्तार उदयपुर, डूंगरपुर, झालावाड़, चित्तौड़गढ़ व बारां जिलों में है। इन वनों में सागवान की मात्रा 50 से 75 प्रतिशत के मध्य मिलती है। इनके अतिरिक्त इन वनों में तेंदू, धावड़ा, गुरजन, गोंदल, सिरिस, हल्दू, खैर, सेमल, रीठा, बहेड़ा व इमली के वृक्ष भी पाये जाते हैं।

सागवान अधिक सर्दी व पाला सहन नहीं कर पाता है अतः इन वृक्षों का विस्तार राजस्थान के दक्षिणी क्षेत्रों में अधिक है। सागवान की लकड़ी कृषि औजारों व इमारती कार्यों के लिए बहुत उपयोगी है।

(ii) सालर वन – ये वन 450 मीटर से अधिक ऊँचाई वाले पहाड़ी क्षेत्रों में मिलते हैं। राजस्थान में इन वनों का विस्तार उदयपुर, राजसमन्द, चित्तौड़गढ़, सिरोही, पाली, अजमेर, जयपुर, अलवर व सीकर जिलों में मिलता है। इन वनों के प्रमुख वृक्ष सालर, धोक, कठीरा व धावड़ है। सालर वृक्ष गोंद का अच्छा स्रोत हैं। इसकी लकड़ी पैकिंग के डिब्बे बनाने में ली जाती है। सालर वृक्षों की अधिकता के कारण इन वनों को सालर वन नाम दिया गया है।

(iii) बांस के वन – बांस की अधिकता के कारण इन्हें बांस वन नाम दिया गया है। राजस्थान के प्रचुर वर्षा वाले क्षेत्रों में इन वनों का विस्तार है। राजस्थान में बांसवाड़ा, चित्तौड़गढ़, उदयपुर, बारां, कोटा व सिरोही जिलों में इन वनों का विस्तार हैं। बांसवाड़ा का नाम बांसवाड़ा, बांस के वृक्षों की अधिकता के कारण ही पड़ा है। बांस के वृक्षों के साथ इन वनों में धाकड़ा, सागवान, धोकड़ा आदि वृक्ष भी पाये जाते है।

(iv) धोकड़ा के वन – धोकड़ा के वन राजस्थान के बहुत बड़े क्षेत्र में पाये जाते हैं। रेगिस्तानी क्षेत्रों को छोड़कर राजस्थान के सभी क्षेत्रों का भौगोलिक पर्यावरण इसके अनुकूल है। अतः राजस्थान में इन वनों का विस्तार सबसे अधिक है। राजस्थान में ये वन 240 से 760 मीटर की ऊँचाई के मध्य अधिक मिलते हैं। इनका विस्तार कोटा, बूंदी, सवाईमाधोपुर, जयपुर, अलवर, अजमेर, उदयपुर, राजसमन्द व चित्तौड़गढ़ जिलों में है। राजस्थान में धोकड़ा को धोक के नाम से भी जाना जाता है। ये वन राज्य की प्रमुख वन सम्पदा में शामिल किये जाते हैं।

इन वनों के धोक के साथ–साथ अरून्ज, खैर, खिरनी, सालर, गोंदल के वृक्ष भी पाये जाते हैं। पहाड़ी, तलहटी खेत्रों में धोक के साथ पलाश बहुतायत से मिलता है। कहीं–कहीं झड़बेर व अडूसा भी मिलता है। धोक की लकड़ी बहुत मजबूत होती है। इसे जलाकर इसका कोयला बनाया जाता है।

(v) पलाश के वन – ये वन उन क्षेत्रों में फैले हैं जहाँ धरातल कठोर व पथरीला है। पहाड़ियों के मध्य जल पठारी धरातल है, वहाँ यह बहुतायत में पाये जाते है। ऐसे मैदानी क्षेत्र जो कंकरीले हैं व जहाँ मिट्टी अपेक्षाकृत कम हैं वहाँ भी ये वन मिलते हैं। इसका फैलाव अलवर, अजमेर, सिरोही, उदयपुर, पाली, राजसमन्द व चित्तौड़गढ़ में है।

(vi) खैर के वन – इन वनों का फैलाव राजस्थान के

दक्षिणी पठारी भाग में है। इसके अन्तर्गत झालावाड़, कोटा, बारां, चित्तौडगढ़ व सवाई माधोपुर जिलों के क्षेत्र शामिल हैं। इन वनों में खैर के साथ बेर, धोकड़ा व अरूंज के वृक्ष भी मिलते है।

(vii) बबूल के वन – ये वन गंगानगर, बीकानेर, नागौर, जालौर, अलवर, भरतपुर आदि जिलों में मिलते हैं। जिन क्षेत्रों में धरातल में नमी कम है, वहाँ इनके वृक्षों की मात्रा कम है। अधिक नमी वाले क्षेत्रों में इनकी सघनता बढ़ जाती है। इन वनों में बबूल के साथ नीम, हिंगोटा, अरूंज, कैर व झड़बेर के वृक्ष भी मिलते है।

(viii) मिश्रित पर्णपाती – ये वन राजस्थान के दक्षिणी पहाड़ी क्षेत्र में पाये जाते हैं। सिरोही, उदयपुर, राजसमन्द, चित्तौडगढ़, कोटा व बारां जिलों में इनका विस्तार अधिक है। इन वनों में किसी एक वृक्ष की प्रधानता नहीं है। इनमें सभी तरह के वृक्ष पाये जाते हैं। इन वनों में पाये जाने वाले प्रमुख वृक्ष आँवला, शीशम, सालर, तेंदू, अमलताश, रोहन, करंज, गूलर, जामुन, अर्जुन आदि है।

3. उपोष्ण पर्वतीय वन – इस प्रकार के वन केवल आबू पर्वतीय क्षेत्र में पाये जाते हैं। इन वनों में सदाबहार एवं अर्द्ध–सदाबहार वनस्पति होती है। यहां वृक्षों के सघनता अधिक है। अतः सालभर हरियाली बनी रहती है। इन वनों में आम, बांस, नीम, सागवान आदि के वृक्ष पाये जाते हैं। राजस्थान के कुल वन क्षेत्र के आधे प्रतिशत से भी कम भाग पर इस प्रकार के वन पाये जाते हैं।

वन नीति एवं संरक्षण

वन जीवन का आधार है। वनों की अनियंत्रित कटाई से हमारे देश की जलवायु व स्थलाकृति पर अनेक प्रतिकूल प्रभाव पड़े हैं जैसे – मिट्टी अपरदन, मरूस्थल का प्रसार, बाढ़ों का आना, बंजर भूमि का बढ़ना, जलवायु की विषमता, सूखा, भूमिगत जलस्तर में गिरावट वन्य जीवों की कमी तथा पर्यावरण प्रदूषण आदि।

तीव्रगति से बढ़ती जनसंख्या के बसाव, बढ़ते औद्योगीकरण व कृषि हेतु भूमि प्राप्त करने के लिये विकास के नाम पर वनों को काटा जा रहा है। इन बढ़ती आवश्यकताओं की पूर्ति एवं पर्यावरण आपदाओं से बचने के लिये वनों का संरक्षण अत्यंत आवश्यक है।

भारत में सबसे पहली वन नीति 1894 में अपनायी गयी थी। स्वतंत्रता के बाद 31 मई 1954 को घोषित नई वन नीति के अनुसार भूमि के 33 प्रतिशत भाग पर वन होने चाहिये। हमारे देश में 1988 में नवीन वन नीति घोषित की गई। उसके तीन लक्ष्य बताये गये – पर्यावरण स्थिरता, वनस्पति व जीव–जंतुओं जैसी प्राकृतिक धरोहरों को सुरक्षित रखना तथा जन सामान्यत की बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति।

सरकार द्वारा वन संरक्षण की दिशा में अनेक कार्यक्रम व योजनाएं चलायी जा रही है। सामाजिक वानिकी योजना, राष्ट्रीय पार्कों व अभयारण्यों की स्थापना आदि इस दिशा में महत्वपूर्ण प्रयास है। वन क्षेत्रों के विस्तार व मरूस्थल के प्रसार को नियंत्रित करने के लिए वन अनुसंधान केन्द्र देहरादून तथा केन्द्रीय मरू वन क्षेत्र अनुसंधान जोधपुर द्वारा प्रयास जारी है। वन संरक्षण केवल सरकारी प्रयासों के सहारे नहीं हो सकता है, इसके लिए जनमानस की जागरूकता व सक्रिय सहभागिता आवश्यक है।

वनों के महत्त्व को देखते हुए हमारे राजस्थान में सरकार द्वारा वन विकास के लिए सामाजिक वानिकी, अरावली वृक्षारोपण व वन संरक्षण कार्यक्रम पर विभिन्न प्रकार के वानिकी पुरस्कार दिये जाते है। ये है– वानिकी पंडित पुरस्कार, वृक्ष मित्र पुरस्कार आदि।

वन्य जीव संरक्षण

वनों की बड़े पैमाने पर कटाई से वन्य जीव कम होते जा रहे हैं जो बचे हुये हैं, उनके लिये प्राकृतिक आवास व भोजन की समस्या बनी हुई है। इनका संरक्षण आवश्यक है। वन्य जीवों के प्रति प्रेम भारतीय संस्कृति का अंग रहा है। भारत के सम्राट अशोक महान् के शिलालेखों में वन्य जीवों के शिकार पर अंकुश व संरक्षण के बारे में विवरण मिलता है।

वन्य जीवों को बचाये रखने हेतु निम्न उपाय किए जाने चाहिये –

1. शिकार पर पूर्णतः प्रतिबंध।
2. प्राकृतिक आवास की उपलब्धता।
3. वन्य जीव संरक्षण कानून बनाना एवं उनका कठोरतापूर्वक क्रियान्वयन।

4. राष्ट्रीय उद्यानों व वन्य जीव अभयारण्यों की स्थापना एवं सुदृढ़ प्रबन्धन।

5. जन चेतना का प्रसार एवं जन भागीदारी सुनिश्चित करना।

जैव मण्डलीय सुरक्षित क्षेत्र –

हमारे देश में वन्य जीवों के संरक्षण हेतु 15 जीव मण्डल निकय (आरक्षित क्षेत्र) स्थापित किये गये है। ये हैं – नंदादेवी, सुन्दरवन, मानस, नोकरेक, मन्नार खाड़ी, नीलगिरि, सिमलीपाल, नामदफा, थार का रेगिस्तान, उत्तराखण्ड, कच्छ का छोटा रन, कान्हा, उत्तरी अंडमान, वृहद निकोबार व काजीरंगा।

राष्ट्रीय उद्यान व अभयारण्य –

भारत में वन्य जीवों को संरक्षण प्रदान करने हेतु अब तक 565 वन्य जीव अभयारण्यों तथा 89 राष्ट्रीय उद्यानों की स्थापना की गयी है। देश के दो राष्ट्रीय उद्यानों काजीरंगा (असम) तथा केवलादेव (राजस्थान) को प्रथम बार विश्व विरासत स्थल बनाया गया है। देश के प्रमुख महत्वपूर्ण राष्ट्रीय उद्यान हैं – जिम कार्बेट (उत्तराखण्ड), कान्हा (मध्यप्रदेश) काजीरंगा (असम), बांदीपुर (कर्नाटक), पलामू (बिहार), दाचीगाम (जम्मू काश्मीर), सुन्दर वन (पश्चिमी बंगाल), शांत घाटी (केरल), नन्दनकानन (उड़ीसा), केवलादेव (राजस्थान), काइबुल लम्जाओ (मणिपुर), अन्नामलाई (तमिलनाडु) आदि।

विभिन्न संकटापन्न वन्य जीवों जैसे – बाघ, चीता, हाथी, गिर–सिंह, घड़ियाल, गेंडा, कस्तूरी मृग आदि हेतु विशेष परियोजनाएं चलायी जा रही है।

राजस्थान के वन्य जीव एवं अभयारण्य

प्राकृतिक आवास में रहने वाले जीव–जन्तुओं को वन्य जीव कहते हैं। हमारे राज्य में मुख्यतः बाघ, बघेरे, चीतल, सांभर, चिंकारा, काला हिरण, भेड़िया, रीछ, लोमड़ी आदि वन्य जीव मिलते हैं। यहाँ का राज्य पशु चिंकारा है। राज्य में 22 वन्य जीव अभयारण्य हैं। रणथम्भौर राष्ट्रीय उद्यान–सवाई माधोपुर तथा केवला देव राष्ट्रीय उद्यान–भरतपुर राजस्थान में स्थित राष्ट्रीय उद्यान हैं।

राष्ट्रीय मरू उद्यान–जैसलमेर, सरिस्का अभयारण्य–अलवर व मुकन्दरा हिल्स अभयारण्य–कोटा को राष्ट्रीय उ़द्यान प्रस्तावित किया गया है। रणथम्भोर राष्ट्रीय उ़द्यान व सरिस्का अभयारण्य बाघ संरक्षण के लिये है। केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान विश्व विरासत सूची में शामिल है। यह साइबेरियन सारस के लिये प्रसिद्ध रहा है। अब यहाँ पर इनका आना बहुत कम हो गया है। राष्ट्रीय मरू उद्यान, जैसलमेर वन्य जीवों के साथ ही जीवाश्म (फॉसिल्स) के संरक्षण के लिये प्रसिद्ध है। यहाँ पर आकल क्षेत्र के विशाल जीवाश्म पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र है।

कुरजां राज्य के लोक साहित्य का चर्चित प्रवासी पक्षी है। इनका महत्वपूर्ण केन्द्र खींचन (जोधपुर) है। राज्य में 33 आखेट निषिद्ध क्षेत्र हैं। राज्य का जैविक उद्यान नाहरगढ़ (जयपुर) में है। राजस्थान का राज्य पक्षी गोडावन है जो कि इसके मूल प्राकृतिक वास स्थान पश्चिमी राजस्थान में भी दुर्लभ है। घड़ियालों के संरक्षण हेतु राष्ट्रीय चम्बल घड़ियाल अभयारण हैं। राज्य के प्रमुख अभ्यारण्य तालछापर (चुरू), रामगढ़ विषधारी (बून्दी), कुंभलगढ़ व सज्जनगढ़ (उदयपुर), माउण्ट आबू (सिरोही), कैलादेवी (करौली), सीतामाता व भैंसरोड़गढ़ (चित्तौड़) बंध बारेठा (भरतपुर) टाडगढ़–रावली (अजमेर), जमवारामगढ़ (जयपुर), रामसागर (धौलपुर) आदि है।

खेजड़ली बलिदान

राजस्थान का ''खेजड़ली बलिदान'' पर्यावरण के प्रति जागरूकता का प्रतीक है। खेजड़ी वृक्ष थार का कल्पवृक्ष है। 28 अगस्त, 1730 में जोधपुर के महाराजा ने ग्राम खेजड़ली में खेजड़ी के वृक्षों को काटने का आदेश दिया लेकिन वहाँ के निवासियों द्वारा इसका विरोध किया गया। इसका नेतृत्व अमृता देवी ने किया। उसने पेड़ काटने वालों को ललकार कर कहा ''जो सिर साटे रूख रहें तो भी सस्तो जाण'' इतना कहकर वह पेड़ से चिपक गई तथा खेजड़ी वृक्ष की रक्षा के लिये अपने प्राण न्यौछावर कर दिये। खेजड़ली बलिदान में कुल 363 व्यक्ति (294 पुरूष तथा 69 स्त्री) बलिदान हुए। इसलिए 21 सितम्बर को भारत में पर्यावरण दिवस के रूप में मनाया जाता है। खेजड़ली गांव में उन अमर बलिदानियों का स्मारक बना हुआ है, जहाँ प्रतिवर्ष वृक्ष शहीद मेला लगता है। उनकी स्मृति बनाये रखने के लिये जोधपुर में अमृतादेवी कृष्ण मृग अभ्यारण्य विकसित किया गया है। पर्यावरण संरक्षण व चेतना के क्षेत्र में

राज्य सरकार द्वारा अमृतादेवी स्मृति पुरस्कार भी दिया जाता है।

जैव विविधता का संरक्षण –

किसी प्राकृतिक प्रदेश में मिलने वाले पालतु व जंगली जीव–जन्तुओं तथा वनस्पति की विभिन्नता की बहुलता को जैव विविधता कहा जाता है। हमारा देश जैव विविधता की दृष्टि से एक समृद्ध देश है। विश्व में मिलने वाले कुल 15 लाख जैव विविधताओं में से 40 प्रतिशत भारत में पायी जाती है। भारत में अभी तक लगभग 81,000 जीव–जंतु तथा 45,000 वनस्पति की प्रजातियों को पहचाना जा चुका है। आर्थिक दृष्टि से जीव –जंतु व वनस्पतियाँ बहुत उपयोगी है।

प्रकृति के निर्माण व उसको बनाये रखने में जैव विविधता की अहम भूमिका रहती है। प्रकृति में किसी भी प्रकार के जीव अथवा वनस्पति का विनाश प्रकृति एवं पर्यावरण के लिये खतरनाक हो सकता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से अब तक प्रमुखतः बड़े बांधों के निर्माण, औद्योगिकरण, सघन खेती, बढ़ती आबादी हेतु आवास व भोजन आदि की आवश्यकता से जैव विविधता का खूब विनाश हुआ है। जीव–जंतु व वनस्पतियाँ पर्यावरण संतुलन बनाये रखते हैं। जैव विविधता का विनाश ओजोन परत में छिद्र, हरितगृह प्रभाव के कारण वातावरण में गर्मी बढ़ना इत्यादि पर्यावरणीय समस्यायें बढ़ती जा रही हैं। इस हेतु अंतर्राष्ट्रीय प्रकृति एवं प्राकृतिक संसाधन संरक्षण संगठन (IUCN) बना हुआ है। इसका मुख्यालय स्विट्जरलैण्ड में है। इस दिशा में विश्व प्रकृति निधि (WWF) द्वारा भी कार्य किया जा रहा है।

हमारे देश की जैव विविधता को सतत विकास की दृष्टि से बचाया जाना चाहिये। उनको संरक्षण प्रदान करना समय की आवश्यकता है। देश में जैव विविधता संरक्षण हेतु विभिन्न राष्ट्रीय उद्यान, वन्य जीव अभयारण्य, जैव मण्डलीय सुरक्षित क्षेत्र की स्थापना तथा बाघ परियोजनायें आदि चल रही है। इस हेतु देश के कुछ शोध संस्थान भी कार्य कर रहे हैं, जिनमें प्रमुख हैं– भारतीय वन अनुसंधान– देहरादून, भारतीय वनस्पति उद्यान–कोलकाता, पारिस्थितिकी अनुसंधान संस्थान – बैंगलोर, राष्ट्रीय पर्यावरण अभियांत्रिकी संस्थान – नागपुर आदि।

पर्यावरण चेतना

भारत में पर्यावरण के प्रति वैदिक काल से जागरूकता रही है। विभिन्न पौराणिक ग्रंथों में पर्यावरण के विभिन्न कारकों का महत्त्व व उनको आदर देते हुये संरक्षण की बात कही गयी है। भारतीय ऋषियों ने सम्पूर्ण प्राकृतिक शक्तियों को ही देवता स्वरूप माना है। सूर्य, जल, वनस्पति, वायु व आकाश को शरीर का आधार बताया गया है। अथर्ववेद का ''भूमिसूक्त'' पर्यावरण चेतना का प्रथम लिखित दस्तावेज हैं। ऋग्वेद में जल की शुद्धता, यजुर्वेद में सभी प्रकृति तत्वों को देवताओं के समान आदर देने की बात कही गई है। वैदिक उपासना के शांति पाठ में भी अंतरिक्ष, पृथ्वी, जल, वनस्पति, आकाश आदि सभी में शांति एवं श्रेष्ठता की प्रार्थना करी गई है। वेदों में ही एक वृक्ष लगाने का पुण्य सौ पुत्रों के पालन समान माना गया है। हमारे राष्ट्र गीत वंदेमातरम् में पृथ्वी को ही माता मानकर उसे पूजनीय माना गया है।

हमारी संस्कृति को अरण्य संस्कृति भी कहा जाता हें इसके पीछे भाव यही है कि वन तथा हरे–भरे वृक्षों से सदैव यहाँ का पर्यावरण समृद्ध रहा है। महाभारत एवं रामायण में वृक्षों के प्रति अगाध श्रद्धा बताई गई है। विष्णु धर्मसूत्र, स्कन्द पुराण तथा याज्ञवल्क्य स्मृति में वृक्षों के काटने को अपराध बताया गया है तथा वृक्ष काटने वाले के लिये दण्ड का विधान बताया गया है।

पर्यावरण की हमारी वैदिक परम्परा रही है कि प्रत्येक मनुष्य पर्यावरण में ही पैदा होता है, पर्यावरण में ही वह जीता है और पर्यावरण में ही वह लीन हो जाता है।

वर्तमान में पर्यावरण चेतना के प्रति जागरूकता अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि पर्यावरण प्रदूषित हो जाने से 'ग्लोबल वार्मिंग' की समस्या उत्पन्न हो गई है। इसको रोकने के लिये पर्यावरण प्रबंधन व पर्यावरण शिक्षा का प्रसार जरूरी है, हमारे देश में खेजड़ली आंदोलन, चिपको आंदोलन, अप्पिको आंदोलन, शांतघाटी आंदोलन व नर्मदा बचाओं आंदोलन पर्यावरण चेतना के प्रति जागरूकता के ही परिचायक हैं। राजस्थान में बिश्नोई समाज के 29 सूत्र पर्यावरण संरक्षण के महत्वपूर्ण नियम है।

भारत की मृदा

प्रत्येक देश के आर्थिक जीवन में मिट्टी का बहुत महत्त्व होता है। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में तो इसका महत्व

और भी अधिक है, क्योंकि हमारे देश में 70 प्रतिशत से अधिक लोग अपनी आजीविका के लिए कृषि पर ही आधारित है। मृदा भूमि की वह परत है, जो चट्‌टानों के विखण्डन, विघटन और जीवांशों के सड़ने–गलने से मिलकर बनती है। इसमें पेड़–पौधों को उगाने की क्षमता होती है। इसका निर्माण व गुण चट्‌टानों, जलवायु वनस्पति और समय पर निर्भर करता है।

रचना विधि के अनुसार मिट्‌टी के दो प्रकार हैं – स्थानीय और विस्थापित। ऋतु क्रिया के प्रभाव से विखण्डित चट्‌टानें जब अपने मूल स्थान से नहीं हटती या बहुत कम हटती हैं, तो इस प्रकार से निर्मित मिट्‌टी को स्थानीय मिट्टी कहा जाता है। दक्षिण भारत के पठारों पर ऐसी मिट्‌टी मिलती है। ऐसी मिट्‌टी जिन चट्‌टानों से बनती हैं, उनके गुण उसमें विद्यमान रहते है। यही कारण है कि वहां की रवेदार परिवर्तित चट्‌टानों से निर्मित मिट्टी कंकरीली, मोटे कणों वाली, लाल रंग की और अनुपजाऊ होती है। जहाँ लावा के विघटन से मिट्टी का निर्माण हुआ है, वहां मिट्‌टी काली और उपजाऊ होती है।

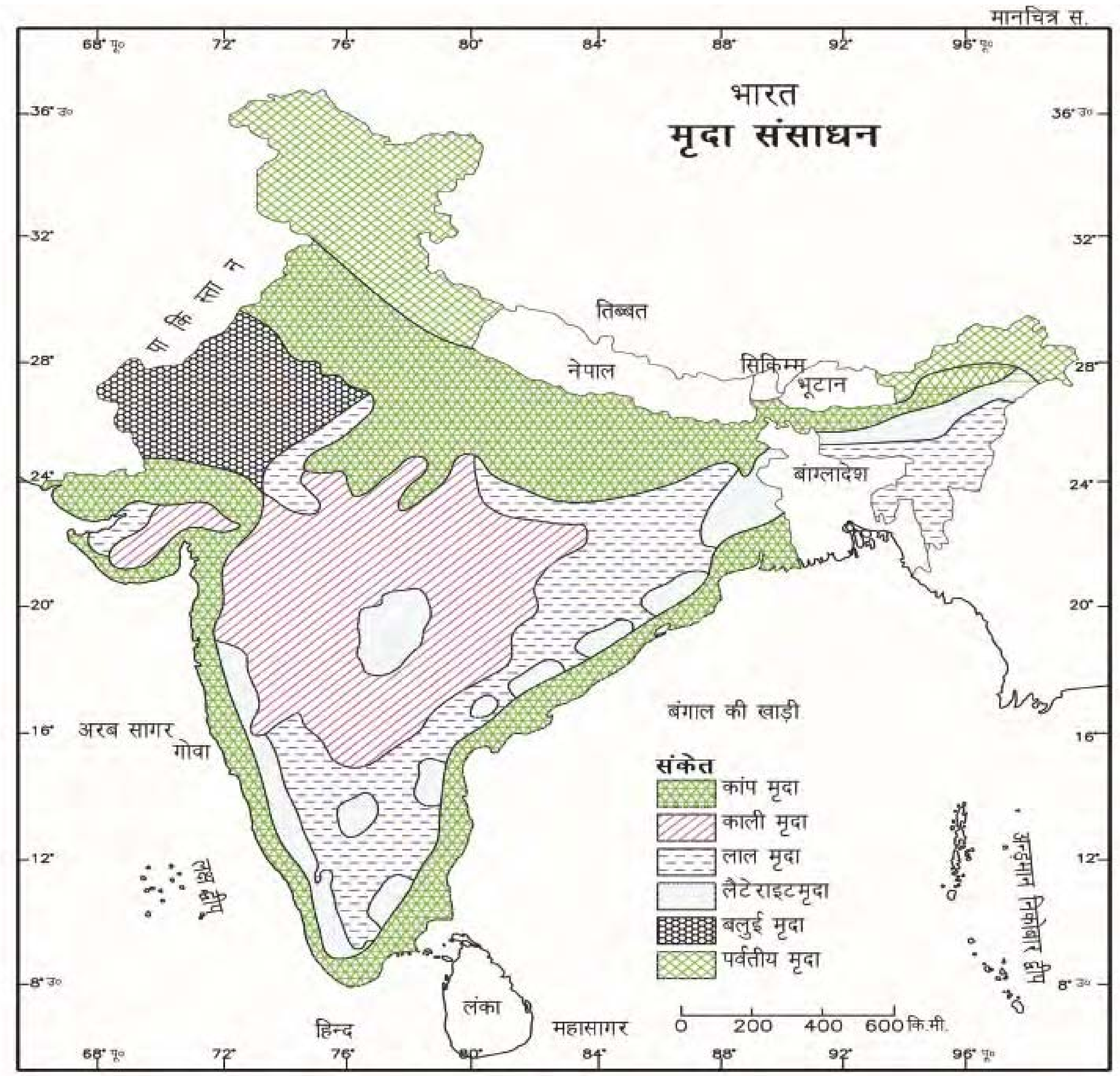

नदी, हिमनद, पवन आदि के प्रभाव से विखण्डित चट्टानों से बनी मिट्टी जब अपने मूल स्थन से हटकर दूर चली जाती है, तो इस तरह से निर्मित मिट्टी को विस्थापित मिट्टी कहा जाता है। भारत में मध्यवर्ती मैदानों तथा तटीय मैदानों की मिट्टियाँ इसी प्रकार की हैं। ये मिट्टियाँ बहुत ही उपजाऊ होती है।

हमारे देश की विशालता व भिन्न प्राकृतिक रचना के कारण यहाँ विभिन्न प्रकार की मिट्टियों का पाया जाना स्वाभाविक है। आर्थिक दृष्टि से इसकी प्रमुख उपयोगिता फसलें उगाने में है। फसलों को उगाने में जुताई की इकाई, भूमि की सिंचाई, उपयुक्त फसलों का चुनाव, अपनाई जाने वाली कृषि–पद्धति इत्यादि का ध्यान रखना पड़ता है, जो बहुत कुछ मिट्टी की किस्म पर भी निर्भर करता है। मिट्टी की रचना व गुणों के आधार पर भारतीय मिट्टियों का वर्गीकरण निम्नानुसार किया जा सकता है –

1. कांप मृदा –

भारत के विशाल मैदान व तटीय मैदान कांप मिट्टी से बने है। यह कॉंप मिट्टी नदियों द्वारा लाकर जमा की गई है। यह मिट्टी लगभग 8 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैली है। भौगोलिक परिस्थितियों के अनुसार इसे तीन भागों में बांटा जाता है।

(अ) पुरातन कांप मृदा – नदियों के बाढ़–क्षेत्रों से ऊँचें भागों में जहाँ बाढ़ का पानी नहीं पहुँच पाता है, पुरातन कांप मिट्टी पायी जाती है। ऐसे क्षेत्रों को बांगर के नाम से भी पुकारा जाता है। इनमें गहन खेती करके वर्ष में दो फसलें उत्पन्न की जाती है। इनमें सिंचाई की आवश्यकता अधिक होती है।

(ब) नूतन कांप मृदा – जहाँ तक नदियों के बाढ़ का पानी पहुँच पाता है, वहाँ तक नूतन कांप मिट्टी पायी जाती है। इसे नूतन कांप इसलिए कहते हैं क्योंकि प्रतिवर्ष नदियों द्वारा लायी हुई मिट्टी की नई परत जमा होती रहती है। नूतन जलोढ़ वाले क्षेत्र को खादर कहते हैं। खादर क्षेत्र की मिट्टी अधिक उपजाऊ होती है। इसमें सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

(स) नूतनतम कांप मृदा – यह मिट्टी गंगा, ब्रह्मपुत्र के डेल्टा प्रदेश में पायी जाती है। इसमें चूना, मैग्निशियम, पोटाश, फॉस्फोरस तथा जीवांश की अधिकता होती है, जिससे कृषि के लिए यह मिट्टी बहुत उपयोगी होती है। यह मिट्टी तटीय मैदानों में भी मिलती है।

इस मिट्टी के क्षेत्र सामान्यतः समतल होते हैं जिन पर नहरें निकलना, कुएँ खोदना तथा खेती करना सुगम होता है। इसमें नमी अधिक समय तक रहती है। यह बारीक कण वाली भूर–भूरी मिट्टी होती है, जिसमें फसलों का उगना तथा पौधों द्वारा सरलता से खुराक प्राप्त करना संभव होता है। इनमें वानस्पतिक अंश (ह्यूमस) अधिक मिलता है क्योंकि नदियों के जल से अनेक वस्तुएं सड़ कर मिट्टी में मिल जाती है। प्रतिवर्ष मिट्टी की नई परत बिछ जाने के कारण इस मिट्टी का प्राकृतिक रूप से नवीनीकरण होता रहता है। अतः खाद देने की आवश्यकता नहीं होती है। ये स्थानान्तरित मिट्टियाँ होने के कारण उपजाऊ होती है।

2. काली या लावा मृदा

यह मिट्टी दक्षिणी भारत के लावा प्रदेश में (महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश के पश्चिमी भाग, आन्ध्र प्रदेश के पश्चिमी भाग व कर्नाटक के उत्तरी भाग, गुजरात व दक्षिण–पूर्वी राजस्थान) में पायी जाती है। भारत में लगभग 5 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में इसका विस्तार है। इस मिट्टी की विशेषता यह है कि इसमें आर्द्रता बनाये रखने की अपूर्व क्षमता होती है। उन स्थानों की मिट्टियां ह्यूमस व जीवांशों की अधिकता के कारण उपजाऊ हैं और लावा निर्मित होने के कारण इसमें लोहा और एल्यूमीनियम खनिजों का अंश अधिक है। पोटाश और चूने का अंश अधिक होता है किन्तु फॉस्फोरस की मात्रा कम होती है। इसकी उर्वरा शक्ति अधिक है और कपास की कृषि के लिये बहुत उपयुक्त है। इसलिये इसे कपास की काली मिट्टी की संज्ञा दी जाती है। इस मिट्टी को रेगर भी कहते है। इसमें सिंचाई की आवश्यकता कम पड़ती है और खाद का भी उपयोग कम ही करना पड़ता है। सूखने पर यह मिट्टी कड़ी हो जाती है और इसमें दरारें पड़ जाती है। नर्मदा, ताप्ती, गोदावरी और कृष्णा नदियों की घाटियों में इसकी परतें 7 मीटर तक गहरी मिलती है। इसमें अब मूंगफली व गन्ने की भी खेती की जाने लगी है और सिंचाई की सुविधा के परिणामस्वरूप उपज में अत्यधिक वृद्धि हुई है।

3. लाल मृदा –

इस मिट्टी की विशेषता यह है कि यह छिद्रदार होती है। इसमें आर्द्रता बनाये रखने की क्षमता नहीं होती है। इसलिये इसमें सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। यह उपजाऊ नहीं

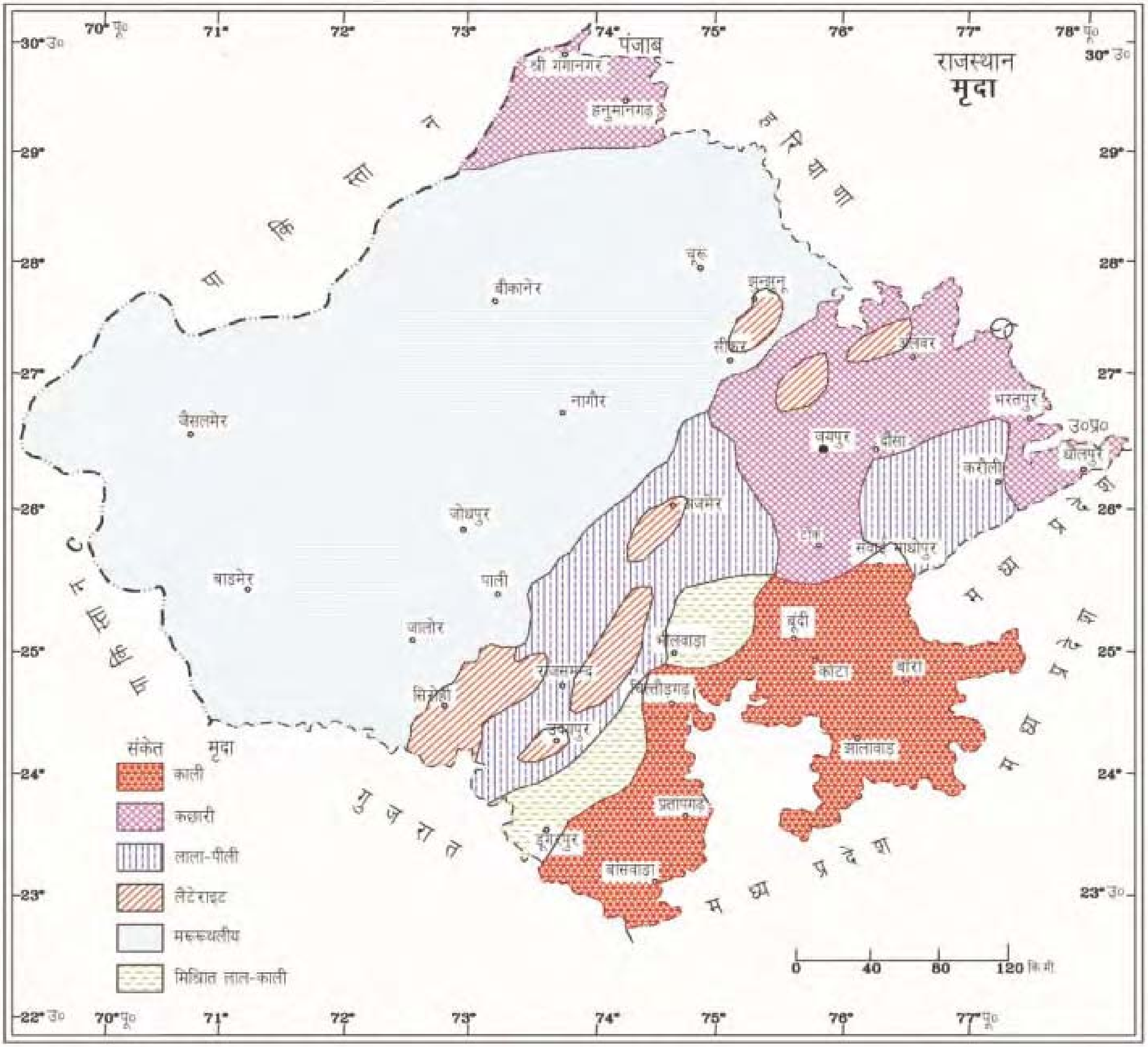

होती है। खाद के उपयोग से इसकी उत्पादकता बढ़ाई जाती है। इसका रंग भूरा और लाल होता है, क्योंकि इसमें लोहे का अंश अधिक रहता है। इसमें कंकड़ भी पाये जाते है। इस मिट्टी में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा जीवांश की कमी रहती है। चूने का अंश भी कम रहता है। इसकी परत पतली होती है। केवल नदी–घाटियों में इसकी गहराई अधिक मिलती है। इस मिट्टी में बार–बार सिंचाई की आवश्यकता होती है। यह मिट्टी छत्तीसगढ़, छोटा नागपुर, उड़ीसा, आन्ध्र–प्रदेश, तमिलनाडु और कर्नाटक में मुख्य रूप से मिलती है।

4. लैटेराइट मृदा –

यह पकी ईंट जैसी लाल रंग की मिट्टी होती है, जिसमें कंकड़ों की प्रधानता रहती है। यह पुरानी चट्टानों के विखण्डन से बनी होती है। इसमें लोहा और एल्यूमीनियम की मात्रा अधिक रहती है, किन्तु चूना, फॉस्फोरस, नाइट्रोजन, पोटाश और जीवांश की कमी रहती है। यह उन भागों में मिलती है, जहाँ अधिक वर्षा होती है, साथ ही तापमान भी अधिक रहता है। अधिक वर्षा के कारण सिलिका, रसायनिक लवण तथा बारीक उपजाऊ कण बह जाते हैं। इस मिट्टी के क्षेत्र ऊसर हैं। सूखने पर यह मिट्टी

पत्थर की तरह कड़ी हो जाती है। यह मिट्टी मुख्य रूप से पश्चिमी घाट क्षेत्र में मिलती है। पूर्वी घाट के किनारे से राजमहल पहाड़ी और पश्चिमी बंगाल होते हुए असम तक इसकी संकड़ी पट्टी पाई जाती है। इस पर चाय की खेती खूब होती है। इस मिट्टी में कहीं–कहीं वृक्ष भी उगते हैं जिनसे इमारती लकड़ी प्राप्त की जाती है।

5. बलुई मृदा –

यह मिट्टी पश्चिमी राजस्थान, सौराष्ट्र व कच्छ की मरूभूमि में मिलती है। इसमें क्षारीय तत्वों की अधिकता होती है, किन्तु नाइट्रोजन, ह्यूमस आदि तत्वों की कमी रहती है। शुष्क व रंध्रमय होने के कारण पवनों के द्वारा स्थानान्तरित होती रहती है। सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो जाने पर यह मिट्टी काफी उत्पादक सिद्ध होती है। हनुमानगढ़, गंगानगर व बीकानेर में कृषि की समृद्धि इसकी पुष्टि करती है। इसी से प्रेरणा लेकर इन्दिरा गांधी नहर योजना पर तेजी से कार्य चल रहा है। यह नहर जैसलमेर के निकट मोहनगढ़ से आगे तक पहुंच गई है। इसके पूर्ण हो जाने पर थार का मरूस्थल लहलहाने लगेगा।

6. पर्वतीय मृदा –

यह मिट्टी हिमालय पर्वतीय क्षेत्र में मिलती है। अपरिपक्व होने के कारण यह मिट्टी मोटे कणों वाली व कंकड़–पत्थर युक्त होती है। अतः इसे अपरिपक्व मिट्टी कहा जाता है। इसकी ह्यूमस व चूने के तत्व कम होते हैं। यह मिट्टी अम्लीय होती है। कुछ स्थानों पर इसकी परत मोटी है। उन स्थानों पर चाय व आलू की कृषि की जाती है। बारीक कणों वाली मिट्टी में सीढ़ीनुमा खेत बनाकर चावल की कृषि की जाती है। कहीं–कहीं उपजाऊ मिट्टी वाले ढालों पर चरागाह पाये जाते है।

राजस्थान की मृदा

प्रकृति प्रदत्त उपहारों में मिट्टी का स्थान सर्वोपरी है। यह कृषक की अमूल्य सम्पदा है। इस पर सम्पूर्ण कृषि उत्पादन निर्भर करता है। राजस्थान एक कृषि प्रधान राज्य है तथा यहां के लोगों का कृषि के साथ–साथ पूरक व्यवसाय पशुपालन है, अतः मिट्टियों का महत्त्व और भी बढ़ जाता है।

प्राकृतिक पर्यावरण में विद्यमान विविधता मिट्टी के विविध प्रकारों को जन्म देती है। मिट्टी के निर्माण पर उच्चावच, जलवायु, प्राकृतिक वनस्पति, समय आदि कारकों का प्रभाव पड़ता है। पैतृक पदार्थ, जल, वायु व ह्यूमस मिट्टी के चार मुख्य घटक है जो इसमें पाये जाते हैं। मिट्टी ठोस, द्रव व गैसीय पदार्थों का मिश्रण हैं जो चट्टानों के अपक्षय, जलवायु, पौधों व अनन्त जीवाणुओं के बीच होने वाली अंतः क्रिया का परिणाम है।

मृदा के प्रकार

राजस्थान की मिट्टियों को रंग, गठन व उपजाऊपन के आधार पर छः वर्गों में बांटा गया हैः–

1. मरूस्थलीय मिट्टी – यह मिट्टी पश्चिमी राजस्थान में पाई जाती है। जालोर, बाड़मेर, जैसलमेर, जोधपुर, बीकानेर, चूरू, झुंझुनू, नागौर आदि जिलों के अधिकांश क्षेत्रों में यह मिट्टी पाई जाती है। यह मिट्टी कम उपजाऊ होती है। अधिक तापान्तर व भौतिक अपक्षय इस मिट्टी के प्रमुख निर्माणक तत्व है। इसका निर्माण प्रधानतः भौतिक अपक्षय द्वारा होता है। यह मृदा पवनों के द्वारा स्थानान्तरित होती रहती है। इसमें उपजाऊ तत्वों की मात्रा कम व लवणता अधिक पाई जाती है। इसमें जल धारण क्षमता कम पाई जाती है।

2. लाल–पीली मिट्टी – इस प्रकार की मृदा सवाईमाधोपुर, सिरोही, राजसमन्द, उदयपुर व भीलवाड़ा जिलों के पश्चिमी भागों में पाई जाती है। इस मिट्टी में उपजाऊ तत्वों की कमी होती है। यह मिट्टी ग्रेनाईट, शिस्ट व नीस चट्टानों के विखण्डन से निर्मित है। इसमें चूना व नाइट्रोजन की कमी पाई जाती है। लौह अंश के कारण इस मिट्टी का रंग लाल व पीला होता है। यह मिट्टी मूंगफली व कपास की कृषि के लिए उपयुक्त है।

3. लैटेराइट मिट्टी – यह डूंगरपुर, उदयपुर के मध्य व दक्षिणी भागों एवं दक्षिणी राजसमन्द जिले में मिलती है। यह प्राचीन स्फट्कीय व कायान्तरित चट्टानों से निर्मित है। इसमें नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, ह्यूमस आदि की कमी पाई जाती है। लौह तत्व की उपस्थिति के कारण इस मिट्टी का रंग लाल दिखाई देता है। इस मिट्टी में मक्का, चावल व गन्ने की खेती की जाती है।

4. मिश्रित लाल व काली मिट्टी – यह मिट्टी बांसवाड़ा, पूर्वी उदयपुर, डूंगरपुर, चित्तौड़गढ़ व भीलवाड़ा जिलों में मिलती है। इसमें चूना, नाइट्रोजन व फॉस्फोरस की कमी पाई जाती है पर

पोटाश पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है। इस मिट्टी में चीका की अधिकता पाई जाती है। यह उपजाऊ मिट्टी है, इसमें कपास, गन्ना, मक्का आदि की खेती की जाती है।

5. काली मिट्टी – यह मिट्टी राज्य के दक्षिणी–पूर्वी जिलों कोटा, बूंदी, बारां व झालावाड़ में मिलती है। यह चीका प्रधान दोमट मिट्टी है। इस मिट्टी में कैल्शियम व पोटाश पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है पर नाइट्रोजन की कमी मिलती है। यह उपजाऊ मिट्टी है जिसमें व्यापारिक फसलों, गन्ना, धनिया, चावल व सोयाबीन की अच्छी पैदावार होती है।

6. कछारी मिट्टी – यह राज्य के उत्तरी व पूर्वी जिलों गंगानगर, हनुमानगढ़, अलवर, भरतपुर, धौलपुर, करौली, सवाई माधोपुर, दौसा, जयपुर व टोंक में मिलती है। यह हल्के भूरे लाल रंग की होती है। यह गठन में रेतीली दोमट प्रकार की होती है। यह मिट्टी उपजाऊ होती है। इसमें चूना, फॉस्फोरस, पोटाश व लौह अंश पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं पर नाइट्रोजन की कमी पाई जाती है। यह मिट्टी गेहूँ, सरसों, कपास व तम्बाकू के लिए बहुत उपयोगी है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. भारत में प्राकृतिक वनस्पति के तीन मुख्य भाग हैं – वन, घास, झाड़ियां।
2. भारत के वनों को सदाबहार वन, मानसून वन, शुष्क कंटीले वन, मरूस्थलीय वन, ज्वारीय व पर्वतीय वनों में बांटा जाता है।
3. किसी प्रदेश में पाये जाने वाले जंगली जीव–जंतुओं व वनस्पतियों की विभिन्नता की बहुलता को जैव विविधता कहते हैं।
4. चट्टानों के विखण्डन व विघटन तथा जीवावशेषों के सड़े–गले अंश से मृदा का निर्माण होता है।
5. काली मृदा (रेगर मृदा) कपास, मूंगफली, गन्ने आदि की कृषि के लिए उपयोगी है।
6. केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान विश्व विरासत सूची में शामिल है।
7. राजस्थान का राज्य पशु चिंकारा व राज्य पक्षी गोडावन है।
8. खेजड़ी को राजस्थान का कल्प वृक्ष कहा जाता है

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. राष्ट्रीय वन नीति के अनुसार देश के भौगोलिक क्षेत्रफल के कितने प्रतिशत भाग पर वन आवश्यक हैं–

   (अ) 22 प्रतिशत (ब) 33 प्रतिशत

   (स) 10 प्रतिशत (द) 20 प्रतिशत

2. सदाबहार वन कितने वर्षा वाले भागों में पाये जाते हैं–

   (अ) 100 सेन्टीमीटर (ब) 50 सेन्टीमीटर

   (स) 200 सेन्टीमीटर (द) 100 से 150 सेन्टीमीटर

3. भारतीय वन अनुसंधान संस्थान स्थित है –

   (अ) जयपुर (ब) मसूरी

   (स) नागपुर (द) देहरादून

4. खेजड़ली आंदोलन का नेतृत्व किसने किया था –

   (अ) अमृता देवी (ब) रामो जी

   (स) खेजड़ी देवी (द) सभी गलत

5. भारत में कपास की कृषि के लिये सर्वाधिक उपयुक्त हैं–

   (अ) पर्वतीय (ब) काली

   (स) लाल (स) लैटेराइट

6. भारत में काली मिट्टी है –

   (अ) विस्थापित (ब) दलदली

   (स) लावा जन्य (स) विक्षालन जन्य

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

1. ज्वारीय वन पाये जाने वाले दो क्षेत्रों के नाम लिखिये।
2. भारत के संविधान अनुसार वनों की कितनी श्रेणियाँ बताई गई है ?
3. राजस्थान में सदाबहार वन कहाँ पर मिलते हैं ?
4. जैव विविधता किसे कहते हैं ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. जैव विविधता विनाश के कारणों को बताइये।
2. वन्य जीवों के संरक्षण के उपाय लिखिये।
3. पर्यावरण चेतना के बारे में लिखी बातों को बताइये।
4. राजस्थान के प्रमुख राष्ट्रीय उद्यानों व अभयारण्यों के बारे में लिखिये।

निबन्धात्मक प्रश्न

1. भारत में वनों के प्रकार व संरक्षण का वर्णन कीजिये।
2. राजस्थान के वनों के प्रकार व वन्य जीवों का वर्णन कीजिये।
3. राजस्थान की मिट्टियों का संक्षेप में वर्णन किजिए।

आंकिक

1. भारत के मानचित्र में सदाबहार व ज्वारीय वनों के क्षेत्र दर्शाइये।

वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के उत्तर

1. (ब) 2. (स) 3. (द) 4. (अ) 5. (ब) 6. (स)